साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

शोधालेख

पूर्वोत्तर भारत के' आपातानी जनजाति 'का सामाजिक परिप्रेक्ष्य एक :अवलोकन

आलिया जेसमिना
शोधार्थी तेजपुर विश्वविद्यालय , हिंदी विभाग ,
ई-मेल :aliyajesmina12@gmail.com

सारांश: यह आलेख उत्तरपूर्व- भारत क्षेत्र के संदर्भ में आपतानी जनजाति पर ध्यान केंद्रित करते हुए भारत में जनजातीय संस्कृतियों की समृद्ध परम्परा का अध्ययन करता है। अरुणाचल प्रदेश की जैरोन घाटी में बसी आपतानी जनजाति अपनी लोकतांत्रिक प्रणाली, सांस्कृतिक परंपराओं और पारिस्थितिक प्रथाओं के साथ एक अद्वितीय और विशिष्ट समूह के रूप में सामने आती है। इसमें आपतानी जनजाति के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है | अपनी परंपराओं को संरक्षित करने के लिए आपतानी जनजाति कृषि संस्कृति व प्राकृतिक विरासत को अपनाती है, जहां वे आधुनिक मशीनरी और यांत्रिकीकरण को छोड़कर अपने श्रम पर निर्भर रहते हैं। आपतानी लोगों के त्योहार उनकी जीवंत संस्कृति की अभिव्यक्ति के रूप में कार्य करते हैं, जिसमें हथकरघा कौशल, बांस शिल्प और प्रकृति से गहरा संबंध शामिल है। इसमें आपतानी जनजाति के रीतिरिवाजों-, विशेष रूप से सांस्कृतिक परंपरा पर प्रकाश डाला गया है, जो उनकी आध्यात्मिक मान्यताओं और पौराणिक कहानियों को दर्शाता है। बलि चढ़ाए गए जानवर के सिर को कब्र पर लटकाने और दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं के लिए आत्माओं को जिम्मेदार ठहराने की प्रथा जनजाति के सदियों पुराने परम्परा को रेखांकित करती है। यह आलेख विशेष रूप से साहित्य व सांस्कृतिक क्षेत्र में आपतानी जनजाति के सामने आने वाली चुनौतियों पर भी चर्चा करता है। आपातानी जनजाति के सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य उनके अनूठे रीतिरिवाजों-, परंपराओं और मान्यताओं में गहराई से निहित है | आपातानी लोगों की एक समृद्ध मौखिक परंपरा भी है, जिसमें मिथक, किंवदंतियाँ और लोक कथाएँ पीढ़ियों से चली आ रही हैं। ये कहानियाँ अक्सर उनके विश्वदृष्टिकोण, प्रकृति में विश्वास और प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या को दर्शाती हैं। इसके अतिरिक्त, पारंपरिक गीत, नृत्य और अनुष्ठान आपातानी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के अभिन्न अंग हैं, जो संचार, उत्सव और आध्यात्मिक संबंध के साधन के रूप में कार्य करते हैं। कुल मिलाकर, आपातानी जनजाति के सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य की विशेषता उनकी भूमि से गहरा संबंध, एक

समृद्ध मौखिक परंपरा, सामाजिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के विशिष्ट रूप हैं। आधुनिक प्रभावों और परिवर्तनों के बावजूद, आपातानी लोग भारत की सांस्कृतिक विविधता की समृद्ध आयाम में योगदान करते हुए, अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित कर रहे हैं |

बीज शब्द :उत्तरपूर्व- भारत ,आपतानी ,जनजाति ,पौराणिक ,संरक्षण ,आदिवासी ,आधुनिकीकरण ,अंधविश्वास ,पारिस्थितिक

मूल– आलेख: विभिन्न समुदायों , कौमोंऔर , संस्कृतियों का देश भारत न केवल अनेकता में एकता बल्कि भिन्न -भिन्न प्रकार के जाति जनजातियों- का सहसंबंधो का महासागर है । इसी कारण भारत को विभिन्न जाति संस्कृति व सभ्यता का मिलनभूमि कहा जाता है । इस मिलनभूमि में सदियों से ही जनजाति समाज अपना जीवन गुजर करता हुआ आ रहा है । इन जनजातियों के कारण ही भारत की कला एवं संस्कृतियों में अधिक से अधिक पीढ़ी दर पीढ़ी नए नए विकास व नित्य नवीन रूपों से परिचित होता हुआ नजर आती हैं । हमेशा से ही कला और संस्कृति के संरक्षक के संदर्भ में भारत के विभिन्न जनजातियों की भूमिका व योगदान सराहनीय तथा अतुलनीय रहा है जिसने , अपनी परंपरा और संस्कृतियों के साथ ही रीति-रिवाजों का और जल – जंगल -जमीन का भी संरक्षण करते आये हैंजनजातीय | समुदायों की सामाजिक संरचना उतनी ही प्रकार के होते हैं जिनते कि जनजातीय समुदाय । हर जनजातीय समुदाय का अपना बोली व भाषा- संस्कृति होती है । परन्तु हम सब के मन में यह प्रश्न उठता है किजनजाति - कौन है किसे , कहते हैं कहा , से आया है इनके , लक्षण क्या है इनके , सामाजिक संगठन एवं संस्थाएं क्या है आदि । इसे कुछ विद्वानों ने लोगों की निवास स्थलों को भाषा तथा , सामाजिक और राजनीति भिन्नता को ध्यान में रखकर परिभाषित किया है और उन्ही भिन्नता को ही जनजाति संस्कृतियों का लक्षण भी माना है । इसके आधार पर हम जनजाति संस्कृतियों का निन्म प्रकार के विशेषताओं को देख सकते हैं – जैसे , निश्चित सामान्य भू-भाग एकता , की भावनासामान्य , बोली भाषा अंतर्विवाही , अनुगामी रक्त , संबंधो का परिपालन रक्षा , हेतु मुखिया का निर्धारण राजनितिक , संगठन धर्म , का महत्व ,सामान्य नाम संस्कृति , एवं गोत्र का निर्माण आदि | इन विशेषताओं को आधार लेकर विभिन्न विद्वानों ने अलग अलग परिभाषाएं दी है, **हिंदी विश्वकोश के अनुसारआदिवासी शब्द का प्रयोग किसी" क्षेत्र के मूल निवासियों के लिए किया जाना चाहिए, परंतु संसार के विभिन्न भूभागों में जहाँ अलग-अलग धाराओं में अलग-अलगक्षेत्रों से आकार लोग बसे हैं। उस विशिष्ट भाग के प्राचीनतम अथवा प्राचीन निवासियों के लिए भी इन शब्द का उपयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ इंडियन अमरीका के आदिवासी कहे जाते हैं और प्राचीन साहित्य में दस्यु, निषद, आदि के रूप में जिन विभिन्न प्रजातीय समूहों का उल्लेख किया जाता है उसके वंशज भारत में आदिवासी माने जाते हैं। "**[1]। इस परिभाषाओं से जनजाति का स्वरुप तथा प्रवृत्तियाँ अपने आप से ही स्पष्ट हो जाता है । परन्तु सदियों से ही जनजाति शब्द अपने आप में एक

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

प्रश्न के रूप में हमारे सामने खड़े उतरते हैं क्यूंकि , आदिम मूल्यों का संरक्षण आदिवासी व जनजाति संस्कृति का मुख्य ध्येय है और जबकि सभ्य या भद्र समाज एवं संस्कृति का रुझान उत्तरोत्तर आधुनिकता की और रहता है चाहे , वह विदेशों का देन ही क्यों न हो। इसके अलावा आदिवासी जानजाति संस्कृति का जुड़ाव व निकटता प्रकृति से होता है इसके ,विपरीत आभिजात्य संस्कृति का निकटता आधिकांश कृत्रिम वस्तुओं से होता है । इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि भारत के जनजातीय संस्कृति व समाज को आदि काल से ही सभ्य समाज द्वारा न उनके जाति को आत्मसात कर लिया गया है न उनके संस्कृतियों को मूलधारा में शामिल होने दिया गया है। उन्हें हमेशा से ही हाशिये पर रखा गया है चाहे , वह किसी भी क्षेत्र में ही क्यों न हो।

जनजाति जिसे अंग्रेजी में कहा 'ट्राइब' जाता हैजिसका , अनुवाद बाद में आदिवासी के रूप में किया गया है। आदिवासी संस्कृति भारत में राज्यों के विकास के पूर्व ही अस्तित्व में आया था परन्तु आज भी उन्ही राज्य के बाहर है। भारतीय संविधान के अनुसार जनजाति या ट्राइब को अनुसुचुचित जनजाति के रूप में संज्ञा प्रदान की गयी थी। इस परिप्रेक्ष में हम यह देख सकते हैं कि कुछ विद्वान् इसे आदिवासी तथा कुछ इसे जनजाति नामों से अभिहित करना पसंद करते थे। परन्तु ज्यादातर विद्वान् व लोगों ने इसे आदिवासी नाम देना ही ज्यादा तर्कसंगत मानता है पर ये आदिवासी जनजाति के रूप में ही विख्यात है |**शिलॉग परिषद 1952**ने आदिवासी जनजाति के विशेष संदर्भ में अपना मत इस प्रकार प्रकट किया है कि–

"शिलॉग परिषद " - 1952एक समान भाषा का प्रयोग करनेवाले, एक ही पूर्वजों से उत्पन्न, विशिष्ट भूप्रदेश में वास्तव करने - वाले, तंत्रशास्त्रीय दृष्टि से पिछड़े हुए निरक्षर, खून के रिश्तों पर आधारित सामाजिक, राजकीय, राजनीति, आदि का प्रामाणिक पालन करने वाले एक जिन्सी गुट यानी आदिवासी जाति है। "[2] अत :आदिवासी शब्द उन लोगों के लिए लागू होता है जो आदिम सभ्यता व संस्कृतियों को बचाकर रखने वालाजो , आदि मानव के वंशज तथा आधुनिक सभ्यता से कोसी दूर जंगलों तथा ,पहाड़ों ,वे लोग जो आज भी शिक्षा -दीक्षा से पिछड़े हुए है। परन्तु इनके संदर्भ में एक बात निश्चित है कि भारतीय राष्ट्र की सांस्कृतिक रचना में इनका न केवल योगदान ही रहा है बल्कि हमारे मातृभूमि की रक्षा में इनका सर्वस्व त्याग भी रहा है। भारत में आदिवासियों के आगमान तथा इनके जन्म को लेकर भी कभी कभी प्रश्न उत्थापित किया जाता है। इस संदर्भ में हम महात्मा ज्योतिबा फुले जी की एक कथ्य को यहाँ प्रकट कर सकते हैं ,जैसे–

गोंड " भील क्षेत्री ये पूर्व स्वामी
पीछे आए वहीं इरानी
शूर भील , मछुआरे मारे गए रारों से
ये गए हकाले जंगलों गिरिवनों में।"[3]

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

इससे यह संकेत मिलता है कि आदिवासी पहले कौन थे और उन्हें वनवास कैसे मिला इसका , स्पष्ट उत्तर इन पंक्तियों के माध्यम से फुले जी ने व्यक्त किया है। जनजाति या आदिवासी कहने से हमारे मन में एक धारणा का उदय होता है कि जो लोग शिक्षा - दीक्षा- जाति , धर्म– कर्म , कांड का आधुनिकताबोध , तथा तमाम तरह की कठिनाइयों को झेलने वाला व हमेशा से ही सभ्य समाज द्वारा बानाए गये नियम कानूनों से हाशिये पर रखना अनादि काल से ही दिखाई पड़ता है। मन में यह प्रश्न उठता होगा कि ऐसा क्यों होता है केवल , जनजाति लोग या आदिवासी लोग क्यों पिछड़ेपन का शिकार होता है इस संदर्भ ? में हम हरिराम मीणा द्वारा उल्लेखित कुछ कारणों को देख सकते हैं कोई , भी मनुष्य या जाति किसी भी धर्म या जाति व गोत्र से सम्बन्ध होने पर भी उस व्यक्ति या मनुष्य जाति के विकास का सबसे बड़ा तथा महत्वपूर्ण कारक एवं माध्यम शिक्षा होता। शिक्षा ही किसी समाज का गतिशील कारक के रूप में काम करता है। इस दृष्टि से अगर आदिवासी जनजाति संस्कृतियों की शिक्षा के बारे में कहा जाय तो अन्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक शिक्षा नीतियों की तुलना में काफी अलग स्वरुप रखता है। क्योंकि ज्यादातर सामान्य अध्यापक गेर आदिवासी होने के नाते उन्ही को ध्यान में रखते हुए शिक्षा केलेंडर भी उन्ही के हिसाब से तैयार किया जाता है और इसके अलावा भी आदिवासी समाज के पर्व ,उत्सव ,एवं अन्य अवसरों का ध्यान नहीं रखा जाता जो उनकी सामाजिक ,आर्थिक ,एवं सांस्कृतिक विरासत से गहरा सम्बन्ध रखते हो आदि तमाम तरह के कारण है जिसके परिणामस्वरूप शायद ही जनजातीय लोग आज भी हाशिये पर है। परन्तु वर्त्तमान समय में सरकार द्वारा अनेक प्रकार की योजनाएँ बानाया गया है जिससे , आदिवासी जनजातीय संस्कृति या समाज को आधुनिकता की और बढ़ने की तथा पूरे विश्व के साथ परिचित होने में एक साधन के रूप में प्राप्त हुआ है। उपरोक्त इन सभी तथ्यों का ध्यान में रखते हुए हम न केवल भारत में स्थित परन्तु दुसरे प्रान्तों की जनजातियों को भी परख सकते हैं और पूर्वोत्तर भारत में स्थित अरुणाचल प्रदेश की जनजातीय संस्कृतियों को भी उन्ही के बराबर रखा जा सकता है। जिस तरह सदियों से ही पूर्वोत्तर भारत अनेक भाषाभाषियों- का समाहार रहा है उसी , प्रकार यहाँ नाना जाति जनजातियों - का भी महासंगम तथा महामिलनभूमि के कारण यहाँ के मिट्टी में विविध कला एवं संस्कृतियों का सुगंध पाया जाता है। प्रागैतिहासिक काल से ही यहाँ के सात राज्यों में से प्राय :सभी राज्य में जनजातियाँ निवास करता हुआ आया है। उन सात राज्यों में से अगर अरुणाचल के विशेष संदर्भ में देखा जाय तो वहा प्रमुख रूप से निन्म आदिवासी जनजाति देखने को मिलता है जैसे– आदी,आका , आपतानी ,न्यिशी ,तागीन ,गालो ,खामति ,खोवा , मिशमी, खासी ,मोनपा , कुकी , सिंगफोतांग , लुशाई ,सा ,बांग्चुमेमबा , आदि अरुणाचल प्रदेश की उल्लेखनीय तथा मान्यता प्राप्त आदिवासी जनजातियाँ है। इनमें से आपातानी जनजाति न केवल अरुणाचल में बल्कि पूरे पूर्वोत्तर भारत का ही एक विशेष जनजाति है। यद्दपि इनके इतिहास का व संस्कृति का सही - सही पता नहीं चल पाया बल्कि मौखिक रूप से सुनी सुनाई बातों से यह पता लगाया जा सकता है कि यह जनजाति का अपना एक ख़ास लोकतांत्रिक प्रणाली होते है जिससे वह अपना घर-परिवार तथा समाज को चलाते हैं। दरअसल आपातानी पूर्वोत्तर भारत की अरुणाचल प्रदेश के लोअर सुवनसिरी

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

जिले में जाईरों नामक घाटी में रहने वाले एक समूह है। यह जनजाति पूर्वी हिमालय के प्रमुख जातीय समूहों में से एक अनूठी जनजाति हैं। जिनका अपना विशिस्ट सांस्कृतिक परम्पराओं के साथ ही खान- पान ,वेशभूषा-रहन , सहन आदि भी एक अलग ही पहचान प्रदान करता है। एक ख़ास सभ्यता की संरक्षक आपातानी लोगों का अपना कुछ निजी नियम व प्रथा है जिसका पालन वह खेती बाति या जीविकोपार्जन में करते हैं। जिन प्रथाओं में से एक प्रथा तब देखा जाता हैं जब वह लोग खेती को उपजाओं के रूप में तैयार करते हैं। इस समाज में व्यवस्थित भूमि उपयोग की प्रथाओं और प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और संरक्षण के समृद्ध पारंपरिक पारिस्थितिक ज्ञान पुराने काल से ही अधिग्रहित हैं। इनके कृषि प्रणाली में किसी भी तरह के जानवरों या मशीनों का प्रयोग नहीं करते हैं इसके , वजाय वह खुद अपने मेहनत से ही कार्य पूरा कर लेते हैं। यह जनजाति विभिन्न उत्सवों, हथकरघा की नमूना, बेंत और बांस शिल्प की कौशलता एवं जीवंत पारंपरिक ग्रामीण संस्कृति के लिए जाना जाता है। इस जनजाति ने पूरे अरुणाचल के साथ- साथ पूर्वोत्तर भारत का जीवित सांस्कृतिक परिदृश्य का एक अच्छा उदाहरण है, जिन्होंने मनुष्य और पर्यावरण को एक दूसरे के साथ एक दूसरे पर निर्भरता की स्थिति को बनाए रखा है। इसीलिए आधुनिकरण के इस दौर में भी अपनी पारंपरिक प्रथाओं को जीवित रखने में व प्रकृति के अधिक निकट रहने में सफलता हासील की है। इसके अलावा इस जनजाति का प्रमुख दो त्यौहार है – डरी और मायोको जिसके , माध्यम से ही ये लोग अपनी संस्कृति को अभिव्यक्त करता है। आपातानी लोगों के अनुष्ठानो में से एक है गीति परम्परा का अनुष्ठान जो धर्म से सम्बन्ध रखते हैं और जिसके माध्यम से वे लोग आत्माओं व देवताओं के साथ बनाए गए संबंधों का व्यक्त करता है और जिसमें आपातानी जनजातियों से संबधित अनेक प्रकार की मिथकीय कहानियां भी शामिल होता है। इनका एक मान्यता यह भी है कि किसी एक मरे हुए आपातानी व्यक्ति के कब्र के ऊपर उन्ही की लोगों के द्वारा जानवरों को बलि दिया गया सर उसके ऊपर लटकाकर रखा जाना भी एक सांस्कृतिक परंपरा है। इनका यह भी मानना है कि जब कोई दुर्भाग्यवशत:कुछ घटना घट जाता है तो उसका कारण ये लोग प्रेत ,आत्माओं आदि को मानता है और उसके जगह घरेलु जानवरों का बलिदान देते हुए उससे मुक्ति का प्रार्थना करता है। इससे एक बात स्पष्ट लक्षित होता है कि आज भी इन जनजातियों के पारंपरिक व धार्मिक संस्कृतियों में अंधविश्वास पनपे हुए है। यद्धपि ये लोग प्रकृति के अधिक निकट रहा है और इन्हें प्रकृति के संरक्षक भी माना जाता है परन्तु , उसके भीतर आज भी उन्ही पुराने मान्यताओं को ही मानता हुआ देखा जा सकता है जिसके बिपरीत पूरी दुनिया उत्तर आधुनिकता के पीछे भागता हुआ नजर आता हैं। शायद ही इन जनजातियों के इन्ही पुराने मान्यताओं के कारण ही पिछड़ेपन का शिकार होना पड़ता है और आपातानी लोगों को दुसरी जनजातियों की भाँती हमेशा से ही जल- जंगल- जमीन आदि के लिए संघर्षरत नजर आती है।

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

अन्य जाति समुदाय की तरह ही आपातानी जनजातियों का भी कुछ पारंपरिक साज सज्जा होती है जिससे उनका परम्परा व संस्कृति सभ्यता को एक भिन्न रूप की स्वरुप प्राप्त हुआ है और जिसके कारण उन्हे सहज ही पहचाना जा सकता है। इस संदर्भ में हम पुरुष और स्त्री का अलग अलग स्वरुप ले सकते हैं जिनमें , पुरुष अपने माथे के ऊपर एक प्रतीक चिन्ह जैसा पीतल की छड बांधते हैं जिसे स्थानीय भाषा में कहा 'पिडिंग ' जाता है। वे लाल रंग में चित्रित महीन बेंत की पट्टी जैसा कुछ पहनते हैं और वह अपने निचले होंठ के निचे एक टेटू बनाते हैं जो अंग्रेजी के 'टीआकार ' के होता हैं। इसी तरह महिलाएँ भी अपने मुह में टेटू बनाती हैं और हमेशा से ही इसी तरह उनका एक ख़ास परम्परा रहा है जिसके भीतर भी उनका अपना मान्यतायें भी छुपा हुआ है। आदि काल से ही आपातानी लोगों का पहनावें जीवन , शैली यद्दपि सहज व सरल रहा है फिर भी उनके पारंपरिक पोशाक में रंगीन भरी कलाओं का मौजूदगी देखने को मिलता है। इनके जीवन शैली तथा सोचने विचारने की ढंग कुछ अलग ही है। आज भी आपातानी लोगों के समुदाई में पितृसत्तात्मकता की भूमिका उतना ही सबल है जो सुरुआती दौर में था और वह लोग किसी को भी उसी दृष्टी से जाज पड़ताल करता है। इस दृष्टि से उन समाज में स्त्री की तुलना में पुरुषों की ज्यादा महत्व चलता है और घर के मुखिया भी पुरुष ही होता है। इस संदर्भ में आपातानी लोगों में एक परम्परा यह भी देखने को मिलता हैं कि लिंग भेद से ही घर और परिवार में विभाजन तैयार किया जाता है। आपातनी संस्कृति में महिलाएँ को केवल जंगली और रसोई के सब्जियां तोड़ना ,खाना बनानापानी , लाना ,घरों की साफाई करना ,कपड़े और वर्तन साफ करना , बच्चों को संभालना ,आदि के साथ साथ खेत में पुरुषों का थोड़ा बहुत सहायता करना ही है। इसके अलावा पुरुषों का काम शिकार करना और खेत में महिलाओं के साथ पुरुषों का भी हाथ बटाना होता है। इस तरह आपातानी लोग अपने काम काजों में मस्त रहता है और सहज सरल जीवन निर्वाह करता है। आज की प्रासंगिकता के रूप में अगर आपतानी जनजातियों को देखा जाय तो आपातानी लोगों में पहले की तुलना में काफी बदलाव की स्वरुप पाया जाता है और आधुनिकता के इस दौर में एक प्रभावशाली एवं प्रगतिपरक दर दिखाई पड़ता है फिर , भी उनकी अपनी परम्परा ,रीति- रिवाज तथा , संस्कृतियों में एक अलग ही महत्व देखने मिलता है। आज पूरे देश की भाँती उन जनजातियों में भी धीरे धीरे उच्च शिक्षा का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। दलित साहित्य की तरह आदिवासी साहित्य भी जीवन और जीवन के यथार्थ का साहित्य है। कल्पना के आधार पर नहीं है। जो भोगा है वही साहित्यकारों ने लिखा है। आदिवासी जीवन की शैली, समस्याएँ, शोषण एवं पीड़ा ही उनके साहित्य की वस्तु है।

हम स्टेज पर गए ही नहीं"
जो हमारे नाम पर बनाई गई थी
हमें बुलाया भी नहीं गया उँगली के संकेत से

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

हमारी जगह हमें दिखा दी गई

हम वही बैठ गए

हमें खूब सम्मान मिला

और वे स्टेज पर खड़े होकर

हमारा दुःख हमें ही बताते रहे हमारा दुःख अपना ही रहा

जो कभी उनका हुआ ही नहीं। [4]

उपरोक्त इन सभी तथ्य एवं संदर्भो के अनुसार यह कहा जा सकता है कि आपातानी लोग न केवल पूर्वोत्तर प्रदेशों में बल्कि पूरे भारत में अपना पहचान बना चुकी है और उनकी कला एवं संस्कृति-रहन , सहन ,खान- पान -रीति , रिवाज ,नियम- कानून , -उत्सव त्यौहारों आदि का विश्व भर में एक ख़ास महत्व सिद्ध हुई है। वर्त्तमान समय में सरकार द्वारा इन तमाम आदिवासी जनजातियों के लिए अनेक योजनाएँ बनाये गए है और अनेक प्रकार के संवैधानिक अधिनियम भी पारित किया जा चुका है। जिससे सभी जनजातियों की अस्मिता की सुरक्षा बनाए रखने में काफी मददगार सिद्ध हुई है और दुसरे संस्कृति एवं समाज के साथ भी जुड़े रहने में सुविधाएं प्राप्त हुई है। इस संदर्भ में आदिवासी जनजाति अस्मिता के सपक्ष में कही गयी पंडित नेहरु जी की निम्न कथन का उल्लेख स्वरूपित कर सकते हैं ***"–भारत के आदिवासी हजारों वर्षो से इस देश के सबसे पुराने निवासी है। बाद में यहाँ आने वाले समूहों ने इन आदिवासियों को दबाकर रखा है , उनकी जमीन छीन ली, उन्हें पर्वतों व जंगलों में खदेड़ा और उन्हे उत्पीड़कों ने अपने हित में बेगार करने की विवश किया। आज विभिन्न समूहों के लगभग चार करोड़ आदिवासी है (अब करीब दस करोड़) जिन पर सरकार को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, चूकी वे रास्ट्रीय संस्कृति से अलग थलग रह रहे हैं", ,जवाहर लाल नेहरू, 1958*** [5] इस कथन से यह स्पष्ट मत प्रकट होता है कि न केवल वर्त्तमान समय में बल्कि स्वतन्त्रता के पश्चात से ही आजाद भारत में जनजाति के संदर्भ में सापेक्षिक परिकल्पनाएं मुखर हो रही थी साथ ही जनजातीय सह -अस्तित्व के प्रगतिशील पक्ष में जोरदार आपील चल रहे थे जिसका ,पूर्ण प्रभावित असर आज भी देखने को मिलता है।

निष्कर्ष : अरुणाचल प्रदेश की जैरोन घाटी में रहने वाले आपतानी लोग आधुनिकीकरण की लगातार बदलती धाराओं के बीच अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखते हुए, परंपरा और अनुकूलन के अनूठे मिश्रण का उदाहरण पेश करते हैं।आपतानी जनजाति की लोकतांत्रिक प्रणाली, जो उनके इतिहास में गहराई से निहित है, न केवल उनकी पारिवारिक संरचनाओं को नियंत्रित करती है बल्कि उनके सामाजिक तानेबाने को भी आकार देती है। आधुनिक मशीनरी से रहित-, टिकाऊ कृषि पद्धतियों के प्रति उनकी

साहित्यिक पत्रिका अंक – 1, खंड-1 , सम्पादक- डॉ. अंजु लता

प्रतिबद्धता, प्रकृति के साथ उनके सामंजस्यपूर्ण सहअस्तित्व को रेखांकित करती है। यह प्रतिबद्धता-, हथकरघा, बेंत और बांस शिल्प में उनके कौशल के साथ मिलकर, एक जीवंत सांस्कृतिक परिदृश्य को प्रदर्शित करती है, जो परंपरा और समकालीन दुनिया के बीच की खाई को पाटती है। उनकी सांस्कृतिक विरासत न केवल अपने अनूठे रीतिरिवाजों को व्यक्त करते हैं बल्कि - उनके विश्वदृष्टिकोण को आकार देने में पौराणिक कहानियों और धार्मिक प्रथाओं के महत्व को भी उजागर करते हैं। बलि चढ़ाए गए जानवर के सिर को कब्र के ऊपर रखने की रस्म और अलौकिक शक्तियों में विश्वास, प्रकृति के साथ उनके गहरे संबंध के साथ अस्तित्व को प्रदर्शित करता है।-साथ सदियों पुराने अंधविश्वासों के सह-बहरहाल यह ,स्पष्ट होता हैं कि भारतीय सांस्कृतिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य की प्रगतिशीलता में आपातानी जनजाति का एक विशेष महत्व हैं| इस जन समुदाय ने अपनी पारंपरिक विरासत और लोकत्रांतिक दृष्टि से पूर्वोत्तर भारत के वैचारिक और सांस्कृतिक आयामों को एक नई दिशा – दशा प्रदान की हैं |

संदर्भ सूची

1. हिंदी विश्वकोश खण्ड1-, प्रधान संकमलापति त्रिपाठी ., पृ370 .
2. बन्ने.डॉ , पंडित हिंदी ,साहित्य में आदिवासी विमर्श15-पृष्ट ,
3. गुप्ता, रमणिका, आदिवासी कौन 76 -पृष्ठ , ?
4. गुप्ता, सं,रमणिका . आदिवासी साहित्य यात्रा, पृ .28 (वाहरू सोनवणे की 'स्टेज' कविता(
5. मीणा ,हरिरामआदिवासी , दुनिया, पृष्ट- 52

सहायक ग्रन्थ :

1. गुप्ता ,रमणिका.आदिवासी कौन:दिल्ली , राधाकृष्ण प्रकाशन,2016
2. मीणा, हरिराम.आदिवासी दुनिया. भारत :राष्ट्रीय पुस्तक न्यास,2013
3. सिंह ,विजेंद्र प्रताप गोंड , रवि कुमार कान्त , विष्णुआदिवासी . अस्मिता के नए आयाम,.दिल्ली: सन्मति पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटरस,2016
4. बोसएल .एम ,.हिस्ट्री ऑफ अरुणाचल प्रदेश.अरुणाचल: संकल्पना प्रकाशन,1997

5. त्रिपाठी. संकमलापति त्रिपाठी ., हिंदी विश्वकोश खण्ड1-, वाराणसी नागरी :प्रचारिणी सभा,1968

6. बन्ने, डॉ. पंडित हिंदी .साहित्य में आदिवासी विमर्श.कानपूर: अमन प्रकाशन,2014

7. स. वी समकालीन .विजी ,हिंदी आदिवासी साहित्य, दिल्ली: अनुज्ञा बुक्स,2021

8. मीणा केदार ,प्रसाद. आदिवासी प्रतिरोध. दिल्ली: अनुज्ञा बुक्स, 2017

9. Subramanyam, Planiappan . Apatani: The Forgotten origin. Chennai: Notion Press, 2019